2 जून 2014, कुल पृष्ठ : 8, मूल्य : 2/- आर. एन. आई. 31109/77 RJ / J. P. C / FN-32 / 2012-14

जैन पथप्रदर्शक

ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)

नैतिक एवं सामाजिक चेतना का अग्रदूत निष्पक्ष पाक्षिक

डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के व्याख्यान प्रतिदिन अब आधे घंटे जी-जागरण पर प्रतिदिन प्रातः 6.30 से 7.00 बजे तक

वर्ष : 37, अंक : 5 सम्पादक : पण्डित रतनचन्द भारिल्ल आजीवन शुल्क : 251 रुपये

जून (प्रथम), 2014 (वीर नि. संवत्-2540) सह-सम्पादक : डॉ. संजीवकुमार गोधा व पण्डित परमात्मप्रकाश भारिल्ल वार्षिक शुल्क : 25 रुपये

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट द्वारा संचालित –

देश की राजधानी दिल्ली में 48वाँ आध्यात्मिक शिक्षण-प्रशिक्षण शिविर

● देश के विभिन्न प्रान्तों से पधारे हुये 3000 से अधिक आत्मार्थी ज्ञानयज्ञ में लाभान्वित ●प्रात: 5 से रात्रि 10 बजे तक विभिन्न कार्यक्रमों के माध्यम से 16 घण्टे अविरल ज्ञानगंगा प्रवाहित ● शिविर में लगभग 38 विद्वानों द्वारा धर्मप्रभावना।

दिल्ली : यहाँ दिलशाद गार्डन में रविवार, दिनांक 18 मई से बुधवार, दिनांक 4 जून 2014 तक आध्यात्मिकसत्पुरुष श्रीकानजीस्वामी की 125वीं जन्मजयंती के विशेष अवसर पर देश की राजधानी दिल्ली में प्रथम बार पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट द्वारा संचालित एवं इन्द्रप्रस्थ धर्मांचल शिक्षण प्रशिक्षण शिविर समिति दिल्ली (अन्तर्गत दि. जैन कुन्दकुन्द कहान परमागम मंदिर ट्रस्ट विश्वास नगर दिल्ली) द्वारा आयोजित 18 दिवसीय 48वाँ वीतराग-विज्ञान आध्यात्मिक शिक्षण-प्रशिक्षण शिविर अत्यंत भव्यता के साथ एवं हर्षोल्लास पूर्वक चल रहा है।

उद्घाटन समारोह : दिनांक 18 मई को शिविर का ऐतिहासिक उद्घाटन समारोह आयोजित हुआ।

इस प्रसंग पर प्रात:काल विशाल जिनेन्द्र शोभायात्रा निकाली गई, जिसमें पूरे हिन्दुस्तान से पधारे हुए युवक-युवतियों और साधर्मियों ने भाग लिया। श्रीजी को रथ में लेकर साथ चलने का सौभाग्य श्री सुनीलकुमार सुरेशकुमार जैन परिवार दिल्ली को तथा सौधर्म इन्द्र बनने का सौभाग्य जिनेन्द्रकुमार मनीषकुमार जैन परिवार दिल्ली को प्राप्त हुआ।

समारोह की अध्यक्षता एवं मंच उद्घाटन श्री अजितप्रसादजी जैन दिल्ली ने किया। श्री रघुनाथ सहाय सुमतप्रसादजी जैन परिवार (धनौरा वाले),दिल्ली के करकमलों से ध्वजारोहण किया गया।

समारोह में तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल, पण्डित रतनचंदजी भारिल्ल जयपुर, पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली, ब्र. यशपालजी जैन जयपुर, ब्र. सुमतप्रकाशजी खनियांधाना, पण्डित राजेन्द्रकुमारजी जैन जबलपुर, पण्डित परमात्मप्रकाशजी भारिल्ल मुम्बई, डॉ. संजीवकुमारजी गोधा जयपुर, पण्डित पीयूषजी शास्त्री जयपुर, पण्डित अशोकजी लुहाड़िया मंगलायतन, पण्डित सोनूजी शास्त्री जयपुर, पण्डित धर्मेन्द्रजी शास्त्री कोटा आदि विद्वानों के अतिरिक्त श्री पंकजजी जैन आई.ए.एस.(सेक्रेटरी-भारत सरकार), श्री राजीव जैन (आई.ए.एस.), श्री रमाकान्तजी गोस्वामी (पूर्व परिवहन मंत्री, दिल्ली सरकार), डॉ. हर्षवर्धन, श्री संदीपजी दीक्षित, श्री जितेन्द्रसिंह शंटी (विधायक) आदि देश के अनेक विशिष्ट महानुभाव मंचासीन थे।

इस अवसर पर पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट का परिचय कार्यकारी महामंत्री पण्डित परमात्मप्रकाशजी भारिल्ल ने दिया।

कार्यक्रम का मंगलाचरण वीतराग-विज्ञान पाठशाला के छात्रों ने किया। मंगलाचरण के पश्चात् श्री आयोजन कमेटी के पदाधिकारियों ने सभी महानुभावों का स्वागत किया।

इस अवसर पर डॉ. भारिल्ल ने अपने उद्बोधन में कहा कि अध्यात्म विद्या को संगमरमर के पत्थरों पर खुदवाकर सुरक्षित नहीं किया जा सकता; अपितु कोमलमति बालकों में तत्वज्ञान को प्रतिष्ठित करने पर ही जिनधर्म सुरक्षित रह सकता है। इसके अतिरिक्त श्री पंकजजी, ब्र. सुमतप्रकाशजी, अजितजी दिल्ली आदि महानुभावों ने भी अपने विचार व्यक्त किये।

अंत में आयोजन समिति के अध्यक्ष श्री मंगलसेनजी जैन ने सभी महानुभावों का धन्यवाद ज्ञापित किया। सम्पूर्ण कार्यक्रम का संचालन श्रीमती आशा जैन एवं स्थानीय विद्वान विवेकजी शास्त्री ने किया।

प्रात:कालीन प्रवचन – प्रतिदिन आध्यात्मिकसत्पुरुष गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के सी.डी.प्रवचन (छहढाला की तीसरी ढाल) के बाद तार्किक विद्वान डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के ग्रन्थाधिराज समयसार के परिशिष्ट में सम्मिलित 47 शक्तियों पर मार्मिक प्रवचन हुये।

रात्रिकालीन प्रवचन – ब्र. सुमतप्रकाशजी खनियांधाना के प्रतिदिन हुये प्रवचनों के पूर्व क्रमशः पण्डित राजेन्द्रकुमारजी जबलपुर, पण्डित परमात्मप्रकाशजी भारिल्ल जयपुर, पण्डित रतनचंदजी भारिल्ल जयपुर, पण्डित संजयजी शास्त्री मंगलायतन, पण्डित राजकुमारजी शास्त्री बांसवाड़ा, पण्डित पीयूषजी शास्त्री जयपुर, पण्डित शान्तिकुमारजी पाटील जयपुर, पण्डित धर्मेन्द्रजी शास्त्री कोटा के विभिन्न विषयों पर मार्मिक प्रवचन हुये।

(शेष पृष्ठ 5 पर ...)

सम्पादकीय –

कुछ अनछुए पहलू

– पण्डित रतनचन्द भारिल्ल

(गतांक से आगे...)

अनेकान्त ने श्रोताओं से प्रश्न किया ह्न ''चारों अभावों का स्वरूप समझ में आया ?''

विराग ने हाथ ऊँचा करते हुए थोड़ा रुक कर कहा ह्न ''हाँ, आ गया।''

अनेकान्त ने कहा ह्न ''आ गया तो बताओ देह और आत्मा में कौन-सा अभाव है, सकारण उत्तर दो।''

विराग ने कहा ह्न ''अत्यन्ताभाव है, क्योंकि देह और आत्मा भिन्न-भिन्न दो द्रव्य हैं और द्रव्यों के बीच अत्यन्ताभाव होता है।''

अनेकान्त ने पुन: पूछा ह्न बताओ ''पुस्तक और घड़े में कौन-सा अभाव है?''

अनुराग ने हाथ उठाया और संकेत पाकर उत्तर दिया ह्न ''अन्योन्याभाव, क्योंकि पुस्तक और घड़ा दोनों पुद्गल द्रव्य की वर्तमान पर्यायें हैं।''

अनेकान्त ने प्रोत्साहित करते हुए कहा ह्न ''बहुत अच्छा...पर ध्यान रखें प्रश्न सुनकर पहले हाथ उठायें, फिर जिससे ह्न उत्तर देने को कहें, वही उत्तर दे। इससे सबको सोचने का अवसर मिलता है।

अच्छा बताओ ह्न ''आत्मा अनादि से केवलज्ञानमय है ह्न ऐसा माननेवाले ने कौन-सा अभाव नहीं माना और क्यों ?....''अनेकान्त ने सम्यक् की ओर संकेत किया।

सम्यक् ने कहा ह्न ''प्रागभाव, क्योंकि केवलज्ञान तो ज्ञानगुण की पर्याय है न, अत: केवलज्ञान होने के पूर्व की मतिज्ञानादि पर्यायों में उसका अभाव है।''

अनेकान्त ने कहा ह्न ''आशा है, चार अभावों का स्वरूप तुम्हारी समझ में अच्छी तरह आ गया होगा ? यदि आ गया तो बताओ ह्न

शरीर और जीव में कौन-सा अभाव है।''

श्रोता ह्न ''अत्यन्ताभाव, क्योंकि एक पुद्गल द्रव्य है और दूसरा जीव द्रव्य है और दो द्रव्यों के बीच होनेवाले अभाव को ही अत्यन्ताभाव कहते हैं।''

दूसरे श्रोता से प्रश्न ह्न ''टेबल और माईक में कौन-सा अभाव है?''

श्रोता ह्न ''अन्योन्याभाव, क्योंकि टेबल और माईक दोनों पुद्गल द्रव्य की वर्तमान पर्यायें हैं।''

तीसरे श्रोता से प्रश्न ह्न ''यह वर्तमान राग मुझे जीवन भर परेशान करेगा' ऐसा मानने वाले ने कौन-सा अभाव नहीं माना?''

श्रोता का उत्तर ह्न ''प्रध्वंसाभाव, क्योंकि वर्तमान राग का भविष्य की चारित्रगुण की पर्यायों में अभाव है, अत: वर्तमान राग भविष्य के सुख-दुख का कारण नहीं हो सकता।''

एक जिज्ञासु ने प्रश्न किया ह्न कृपया बतायें कि ह्न ''इन चार प्रकार के अभावों को समझने से क्या-क्या लाभ हैं ?''

अनेकान्त ने उत्तर में कहा ह्न ''अनादि से मिथ्यात्वादि महापाप करनेवाला आत्मा पुरुषार्थ करे तो वर्तमान में उनका अभाव कर सम्यक्त्वादि धर्म दशा प्रगट कर सकता है, क्योंकि वर्तमान पर्याय का पूर्व पर्याय में अभाव है, अत: प्रागभाव समझने से 'मैं पापी हूँ, मैंने बहुत पाप किये हैं, मैं कैसे तिर सकता हूँ ? आदि हीन भावना निकल जाती है।

प्रध्वंसाभाव के समझने से यह ज्ञान हो जाता है कि वर्तमान में कैसी भी दीन-हीन दशा हो, भविष्य में उत्तम से उत्तम दशा प्रगट हो सकती है; क्योंकि वर्तमान पर्याय का आगामी पर्यायों में अभाव है, अत: वर्तमान पामरता देखकर भविष्य के प्रति निराश न होकर स्वसन्मुख होने का पुरुषार्थ प्रगट करने का उत्साह जागृत होता है।''

जिज्ञासु ने निवेदन किया ह्न ''कृपया अन्योन्याभाव और अत्यन्ताभाव की स्वीकृति से क्या-क्या लाभ है ?''

अनेकान्त ने बताया कि ''अन्योन्याभाव की श्रद्धा से अभक्ष्य-भक्षण के विकल्प खत्म हो जाते हैं। **अल्प फल बहुविघात** जैसी पाप क्रियायें रुक जाती हैं; क्योंकि एक पुद्गल की वर्तमान पर्याय का दूसरे पुद्गल की वर्तमान पर्याय में अभाव है, अत: शरीर में अभक्ष्य पदार्थ से जब कुछ लाभ ही नहीं तो व्यर्थ में यह पाप क्यों करना ?

अत्यन्ताभाव यह बताता है कि दो द्रव्यों के बीच में जब वज्र की दीवार है, एक द्रव्य का दूसरे से कुछ भी संबंध नहीं है, ऐसी परिस्थिति में परद्रव्य हमारा कुछ भी भला-बुरा नहीं कर सकते। ऐसी श्रद्धा से पर के प्रति राग-द्वेष स्वत: कम होने लगते हैं और हम वीतराग धर्म की ओर अग्रसर होते हैं।

इसतरह चारों अभावों के समझने से स्वाधीनता का भाव जागृत होता है, पर से आशा की चाह समाप्त होती है, भय का भाव निकल जाता है, भूतकाल और वर्तमान की कमजोरी और विकार देखकर उत्पन्न होनेवाली दीनता समाप्त हो जाती है और स्वसन्मुख होने का पुरुषार्थ जागृत होता है। आशा है, अब तुम्हारी समझ में इनके जानने से क्या लाभ है, यह भी आ गया होगा ?''

अन्त में कुछ श्रोताओं से वक्ता ने पुनः कुछ प्रश्न किए, जिनके संतोषजनक उत्तर प्राप्त हुए। श्रोता ने कहा ह्न ''जो आपने समझाया, वह सब बहुत अच्छी तरह समझ में आ गया।''

''आ गया तो बताओ ! 'शरीर मोटा-ताजा हो तो आवाज भी बुलन्द होती है' ह्न ऐसा माननेवाला क्या गलती करता है ?''

उत्तर ह्न ''वह अन्योन्याभाव का स्वरूप नहीं जानता, क्योंकि शरीर का मोटा-ताजा होना आहार वर्गणारूप पुद्‌गल का कार्य है और आवाज बुलन्द होना भाषा वर्गणा का कार्य है। इन दोनों में अन्योन्याभाव है।

दूसरे श्रोता से प्रश्न ह्न ''ज्ञानावरणी कर्म के क्षय के कारण आत्मा में केवलज्ञान होता है' ऐसा माननेवाले ने क्या भूल की?''

श्रोता का उत्तर ह्न ''उसने अत्यन्ताभाव को नहीं जाना, क्योंकि ज्ञानावरणी कर्म पुद्‌गल द्रव्य और आत्मा जीवद्रव्य है, दोनों में अत्यन्ताभाव है, फिर एक द्रव्य के कारण दूसरे द्रव्य में कार्य कैसे हो सकता है ?''

तीसरे श्रोता से प्रश्न ह्न ''शास्त्र में ऐसा क्यों लिखा है कि ज्ञानावरणी कर्म के क्षय से केवलज्ञान की प्राप्ति होती है ?''

श्रोता का उत्तर ह्न ''शास्त्र में ऐसा निमित्त का ज्ञान कराने के लिए असद्‌भूत व्यवहारनय से कहा जाता है, किन्तु वस्तुत: निश्चयनय से विचार किया जाय तो एकद्रव्य दूसरे द्रव्य के कार्य का कर्ता हो ही नहीं सकता।''

अनेकान्त ने कहा ह्न ''आपने मेरी बात को ध्यान से सुना, एतदर्थ धन्यवाद। देखो, वस्तुस्वरूप तो अनेकान्तात्मक है। अकेला भाव ही वस्तु का स्वरूप नहीं है, अभाव भी वस्तु का धर्म है। उसे माने बिना वस्तु की व्यवस्था नहीं बनेगी। चारों अभावों का स्वरूप अच्छी तरह समझ मोह-राग-द्वेषादि विकारों का स्वतः ही अभाव हो जाता है।'' सभी श्रोता अभाव का स्वरूप समझकर राग-द्वेष का अभाव करने का प्रयत्न करें ह्न इसी भावना से विराम लेता हूँ।'' ●

मुक्त विद्यापीठ के छात्रों हेतु सूचना

श्री टोडरमल जैन मुक्त विद्यापीठ परीक्षा बोर्ड, ए-4, बापूनगर, जयपुर-302015 (राज.) के **प्रथम सेमेस्टर की परीक्षायें जून 2014 के अंतिम सप्ताह में होने जा रही है।** परीक्षा के एक सप्ताह पूर्व (लगभग 25 जून तक) सभी परीक्षार्थियों को एनरोलमेंट नम्बर व प्रश्नपत्र भेज दिए जावेंगे। जिन परीक्षार्थियों ने अभी भी परीक्षा की तैयारी शुरु नहीं की है, वे शीघ्र तैयारी में जुट जावें।

परीक्षा कार्यक्रम निम्नानुसार है -

परीक्षा कार्यक्रम एवं पाठ्यक्रम

द्विवर्षीय विशारद परीक्षा (प्रथम सेमेस्टर)

प्रथम वर्ष (उपाध्याय कनिष्ठ)

1. प्रथम प्रश्नपत्र : वीतराग विज्ञान पाठमाला भाग-1

2. द्वितीय प्रश्नपत्र : छहढाला (70 अंक) + सत्य की खोज (30 अंक)

द्वितीय वर्ष (उपाध्याय वरिष्ठ)

1. प्रथम प्रश्नपत्र : तत्त्वज्ञान पाठमाला भाग-1

2. द्वितीय प्रश्नपत्र : लघु जैन सिद्धांत प्रवेशिका

त्रिवर्षीय सिद्धांत विशारद परीक्षा (प्रथम सेमेस्टर)

प्रथम वर्ष -

1. प्रथम प्रश्नपत्र : गुणस्थान विवेचन

2. द्वितीय प्रश्नपत्र : क्रमबद्धपर्याय (70 अंक) + सामान्य श्रावकाचार (30 अंक)

द्वितीय वर्ष -

1. प्रथम प्रश्नपत्र : समयसार-पूर्वरंग और जीवाजीवाधिकार

2. द्वितीय प्रश्नपत्र : गोम्मटसार कर्मकाण्ड -प्रथम अध्याय

तृतीय वर्ष -

1. प्रथम प्रश्नपत्र : समयसार-कर्ताकर्माधिकार

2. द्वितीय प्रश्नपत्र : गोम्मटसार जीवकाण्ड - गाथा 70 से 215 तक (97 से 112 गाथा छोड़कर)

ध्यान रहे - परीक्षा बोर्ड कार्यालय से जानकारी चाहने हेतु परीक्षार्थी अपना एनरोलमेंट नम्बर का उल्लेख अवश्य करें; ताकि आपके द्वारा चाही गई जानकारी शीघ्र मिल सके। **- ओ.पी.आचार्य (प्रबंधक)**

(पृष्ठ 7 का शेष...)

दु:खरूप होता है। जैसा उक्त छन्द में अत्यन्त स्पष्ट शब्दों में लिखा हुआ है कि पर के दु:ख को देखकर जो दु:ख हमें होता है; उसको सुमतिज्ञानवाले दया कहते हैं और यह दया मोहनीय कर्म के उदय में होती है।

यह दया आत्मा के प्रबल शत्रु मोहराजा की बेटी है।

इसप्रकार हमारे सिद्ध भगवान मोहनीय कर्म और मोहभाव के अभाव के कारण दयाभाव से रहित हैं। दयाभाव से रहित होने का नाम निर्दयभाव है; इसप्रकार **सिद्ध भगवान वस्तुत: अत्यन्त निर्दय हैं। यह निर्दयता उनकी क्वालिटी है, डिस्क्वालिटी नहीं। यह ऐसी क्वालिटी है कि जो प्रशंसा के योग्य है, पूजने लायक है।** **(क्रमश:)**

ओ भूले भगवान ! तुझे अपने अस्तित्व पर ही भरोसा नहीं है, तुझे अपने आप पर ही भरोसा नहीं है !

– परमात्मप्रकाश भारिल्ल

अरे भाई ! तेरा व्यवहार यह बतलाता है कि तुझे आत्मा पर भरोसा है ही नहीं, तुझे आत्मा की अनादि-अनंतता का, अमरता का विश्वास ही नहीं है, कतई नहीं।

बातें तू कुछ भी बनाता रह, बातों से क्या होता है ? तेरा आचरण और व्यवहार तो तेरी बातों के विरुद्ध गवाही देता है।

अब देखो न ! वर्तमान (इस भव के लिए) के छोटे से छोटे लाभ के लिए तू बड़े से बड़ा पाप करने को तैयार रहता है पर आत्मा के भावी कल्याण के लिए छोटा सा उपक्रम भी नहीं करना चाहता है, थोड़ा सा समय भी नहीं देना चाहता है।

दो टके की कमाई के लिए, ग्राहक के दर्शन के लिए सुबह से शाम तक दुकान पर टकटकी लगाए, पलक पांवड़े बिछाए बैठा रहता है पर जिन मन्दिर में भगवान के दर्शन करने का तुझे भाव तक नहीं आता है।

दिन रात धंधे-व्यापार के चिंतन में ही तू मगन बना रहता है पर अपने भगवान आत्मा का तुझे विचार तक नहीं आता है।

इस देह के इलाज के लिए तू सर्वस्व समर्पण करने में भी नहीं हिचकता है, यदि कर्जा भी लेना पड़े तो उसके लिए भी तैयार रहता है पर इस भवभ्रमण के महारोग के लिए तू कुछ भी नहीं करना चाहता है, विचार तक नहीं।

तत्कालीन भूख के तात्कालिक शमन के लिए तू कितने गोरखधंधे करता है, कुछ भी बनाता है, कुछ भी खाता है, भक्ष्य-अभक्ष्य का विचार किये बिना, दिन-रात का विचार किये बिना पर इस अविनाशी आत्मा के अनंतकाल के क्षुधा रोग के विनाश के लिए तू कुछ भी नहीं करना चाहता है।

किसी भी हालत में तू इस वृद्ध, रुग्ण, कृश, कुरूप देह से ही चिपका रहना चाहता है क्योंकि लगता है शायद तुझे भरोसा ही नहीं कि यदि यह देह छूट जायेगी तो दूसरी देह मिलेगी, इससे अच्छी मिलेगी। शायद तुझे भरोसा ही नहीं है कि देह का छूटना आत्मा का मरण नहीं है, यह देह परिवर्तन है, देह का अंत नहीं।

हमारी उक्त प्रवृत्तियाँ इस बात का स्पष्ट संकेत है कि हमें आत्मा की अमरता का, आत्मा की अनादि-अनंतता का भरोसा नहीं है।

यह निश्चित है कि जब तक हम भगवान आत्मा के स्वरूप को जानेंगे नहीं, समझेंगे नहीं, स्वीकार नहीं करेंगे; जब तक हमें आत्मा की अमरता का भरोसा नहीं होगा तब तक हमारी प्रवृत्ति बदलने वाली नहीं है, हमारा आचरण, व्यवहार और जीवन क्रम परिवर्तित होने वाला नहीं है।

जब हमें अपना कोई भविष्य दिखाई ही नहीं देगा तो हमारे सारे के सारे प्रयत्न स्वाभाविक रूप से सिर्फ अपने इस वर्तमान को संवारने के प्रति ही तो समर्पित हो जायेंगे; हाँ यदि हमें दृढतापूर्वक यह निश्चय हो जाए कि मैं अनंतकाल तक रहने वाला भगवान आत्मा हूँ तो भला कौन मूर्ख है जो अपने अनंतकाल की परवाह न करके मात्र आज के, वर्तमान से संबंधित छोटे-छोटे गोरखधंधों में ही उलझा रहेगा।

सारांश यह है कि **आत्मा के सही स्वरूप को स्वीकार किये बिना हमारा कल्याण होना संभव नहीं है और इसलिए हमें और सब काम छोड़कर सर्वप्रथम इस जीवन में आत्मा के स्वरूप का निश्चय करने का उपक्रम ही करना चाहिए। इसके लिए जो कुछ भी करना पड़े करना चाहिए।** यथा-जिनवाणी का पठन-पाठन कर, गुरुओं का सानिध्य कर, आत्मार्थियों से चर्चा कर, तर्क और युक्तियों का उपयोग कर। यह सब तब तक जारी रहना चाहिए जब तक कि तुझे जिनवाणी में वर्णित आत्मा के स्वरूप का संशय, विपर्यय और अनध्यवसाय रहित दृढ श्रद्धान न हो जाए। यदि तू इस मार्ग पर लग गया तो तेरा कल्याण होगा।

टोडरमल स्नातक परिषद् का अधिवेशन संपन्न

दिल्ली : यहाँ दिनाँक 25 मई को सायंकाल पण्डित टोडरमल स्नातक परिषद् का अधिवेशन संपन्न हुआ।

अधिवेशन की अध्यक्षता पण्डित शिखरचंदजी विदिशा ने की। विद्वत्वर्ग में तत्त्ववेत्ता डॉ.हुकमचंदजी भारिल्ल, पण्डित रतनचंदजी भारिल्ल, पण्डित शांतिकुमारजी पाटील जयपुर, पण्डित राजकुमारजी बांसवाड़ा, डॉ. संजीवकुमारजी गोधा जयपुर, पण्डित धर्मेन्द्रजी शास्त्री कोटा आदि विद्वत्गण मंचासीन थे।

स्नातक परिषद् का परिचय देते हुए पण्डित शांतिकुमारजी पाटील ने कहा कि यह एक अनौपचारिक संगठन है, जिसमें प्रत्येक शास्त्री स्वयमेव सदस्य बन जाता है।

स्नातक परिषद् की उपलब्धियों का विवरण देते हुए पण्डित गणतन्त्रजी शास्त्री आगरा ने बताया कि आज कोई भी शास्त्री विद्वान बेरोजगार नहीं है; कोई शिक्षा के क्षेत्र में, कोई व्यापार में कार्य कर रहे हैं, कुछ स्नातक विद्वान तो बैंकिग व दूरदर्शन के क्षेत्र में भी कार्य कर रहे हैं।

इस अवसर पर पण्डित विपिनजी शास्त्री नागपुर द्वारा बनाया गया गुरुदेवश्री से संबंधित 30 विशेष वाक्यों वाले कलैण्डर का विमोचन भी हुआ।

मंगलाचरण श्री निखिल जैन कोतमा ने एवं संचालन पण्डित पीयूषजी शास्त्री जयपुर ने किया।

(पृष्ठ 1 का शेष...)

दोपहर की व्याख्यानमाला में ह्न पण्डित राकेशजी शास्त्री लोनी, डॉ. संजीवकुमारजी गोधा जयपुर, पण्डित सुनीलजी प्रतापगढ, पण्डित रीतेशजी शास्त्री डडूका, पण्डित राकेशजी शास्त्री लिधौरा, पण्डित संदीपजी दिल्ली, पण्डित विपिनजी शास्त्री नागपुर, पण्डित विवेकजी शास्त्री दिल्ली, पण्डित निलयजी शास्त्री आगरा के विविध विषयों पर व्याख्यान हुए।

प्रशिक्षण कक्षायें ह्न बालबोध प्रशिक्षण की सैद्धान्तिक कक्षा पण्डित रतनचंदजी भारिल्ल जयपुर, पण्डित शान्तिकुमारजी पाटील जयपुर, डॉ. शुद्धात्मप्रभा टडैया मुम्बई, पण्डित निखलेशजी दलपतपुर ने एवं शिक्षण पद्धति की कक्षा डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल, पण्डित कमलंचदजी पिड़ावा, पण्डित धर्मेन्द्रजी शास्त्री कोटा ने ली। प्रवेशिका प्रशिक्षण की सैद्धान्तिक कक्षा पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली ने एवं शिक्षण पद्धति की कक्षा पण्डित शान्तिकुमारजी पाटील व पण्डित निखलेशजी दलपतपुर द्वारा ली गई।

प्रशिक्षण अभ्यास कक्षाओं में पण्डित नरेन्द्रकुमारजी जबलपुर, पण्डित धर्मेन्द्रजी शास्त्री कोटा, पण्डित निखलेशजी दलपतपुर, पण्डित नंदकिशोरजी मांगुलकर, पण्डित रीतेशजी डडूका, पण्डित राकेशजी शास्त्री लिधौरा, पण्डित सुनीलजी प्रतापगढ, पण्डित निलयजी शास्त्री आगरा, पण्डित गणतंत्रजी शास्त्री आगरा, पण्डित महावीरजी मांगुलकर, पण्डित अनेकान्तजी शास्त्री दलपतपुर, पण्डित सौरभजी शास्त्री कोटा, विदुषी रंजनाजी बंसल अमलाई, डॉ. ममता जैन बांसवाड़ा, विदुषी लताबेन देवलाली, कु. प्रज्ञा जैन देवलाली का सहयोग प्राप्त हुआ।

प्रशिक्षण कक्षाओं का संचालन पण्डित कमलचंदजी के निर्देशन में पण्डित नरेन्द्रजी, पण्डित धर्मेन्द्रजी, पण्डित निखलेशजी द्वारा संपन्न हुआ।

प्रात:कालीन प्रौढकक्षायें – पण्डित कमलचंदजी पिड़ावा, पण्डित संजयजी शास्त्री मंगलायतन, पण्डित राजकुमारजी बांसवाड़ा, पण्डित ऋषभजी उस्मानपुर, ब्र. कैलाशचंदजी अचल आदि विद्वानों द्वारा ली गईं।

प्रौढ़ कक्षायें ह्न समयसार की कक्षा ब्र.सुमतप्रकाशजी खनियांधाना, तत्त्वज्ञान पाठमाला (भाग 1) की कक्षा पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली, तत्त्वार्थसूत्र (पांचवां अध्याय) की कक्षा पण्डित शान्तिकुमारजी पाटील जयपुर एवं मोक्षमार्गप्रकाशक (सम्यक्त्वसन्मुख मिथ्यादृष्टि प्रकरण) की कक्षा पण्डित नरेन्द्रजी शास्त्री जयपुर ने ली। प्रात:काल की प्रौढकक्षा पण्डित कमलचंदजी पिड़ावा, पण्डित संजयजी शास्त्री मंगलायतन, पण्डित राजकुमारजी बांसवाड़ा, पण्डित ऋषभजी उस्मानपुर, ब्र. कैलाशचंदजी अचल द्वारा ली गई।

बालवर्ग हेतु प्रतिदिन तीन समय कक्षाओं का आयोजन किया गया। इन कक्षाओं का संचालन डॉ. शुद्धात्मप्रभाजी टडैया मुम्बई के निर्देशन में प्रशिक्षणार्थी अध्यापकों द्वारा किया गया, जिसमें 100-150 बच्चे सम्मिलित हुये।

शिविर में 24 तीर्थंकर मण्डल विधान का आयोजन किया गया। विधान के मुख्य आमंत्रणकर्ता श्री वज्रसेन शोभित जैन परिवार विश्वासनगर एवं आमंत्रणकर्ता श्री सुभाष जैन वकीलचंद जैन नांगलोई दिल्ली, श्री सुनील जैन विवेक जैन विश्वासनगर दिल्ली, श्री धीरज जैन अतुल जैन दिल्ली, श्री सचिन्द्र जैन अमित जैन दिल्ली थे। विधान के सह–आमंत्रणकर्ता श्री जयपाल जैन मुकेश जैन दरीवां दिल्ली, श्री प्रवीण जैन राकेश जैन खेकड़ा, श्री वीरेन्द्र जैन निर्मला जैन शिवाजी पार्क दिल्ली, श्री आनंद जैन वीना जैन ज्योति कॉलोनी दिल्ली थे।

शिविर के मुख्य आमंत्रणकर्ता पण्डित राजकिशोर मंगलसेन अनुभव जैन परिवार विश्वास नगर दिल्ली थे। शिविर के आमंत्रणकर्ता श्री जिनेन्द्रकुमार मनीषकुमार जैन परिवार (खतौली वाले) दिल्ली व श्री राजीव जैन कृष्णानगर दिल्ली एवं शिविर के सह–आमंत्रणकर्ता श्री वकीलचंद सुशीलकुमार जैन सूरजमल विहार दिल्ली व श्री वीरेन्द्र जैन राजीव जैन विकास जैन परिवार योजना विहार दिल्ली थे।

आध्यात्मिकसत्पुरुष श्रीकानजीस्वामी का –

जन्मजयंती समारोह संपन्न

दिल्ली : यहाँ दिनाँक 25 मई को प्रात:काल आध्यात्मिकसत्पुरुष श्रीकानजीस्वामी का 125वाँ जन्मदिवस समारोह बहुत हर्षोल्लासपूर्वक मनाया गया।

इस अवसर पर तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल द्वारा गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के व्यक्तित्व–कर्तृत्व पर विशेष व्याख्यान किया गया। इसके पूर्व 125 बालक एवं 125 बालिकाओं ने जिनधर्म की ध्वजा–पताका लेकर मंच के पास आये जिन्हें ब्र. सुमतप्रकाशजी ने विशेष संकल्प दिलाया।

संकल्प दिवस मनाया

दिल्ली : यहाँ प्रशिक्षण शिविर में दिनांक 25 मई को सायंकाल स्नातक परिषद के अधिवेशन के अवसर पर तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल का जन्मदिवस भी संकल्प दिवस के रूप में मनाया गया, जिसमें पण्डित शान्तिकुमारजी पाटील जयपुर ने सभी स्नातक विद्वानों ने गुरुदेवश्री द्वारा उद्घाटित तत्त्वज्ञान का आजीवन प्रचार–प्रसार करने का संकल्प दिलाया।

कार्यक्रम में मुम्बई के 9 वर्षीय बालक ----------- ने डॉ. भारिल्ल की नकल करते हुए अहिंसा विषय पर 15 मिनिट का व्याख्यान दिया, जिसकी सभी श्रोताओं ने सराहना की।

इस अवसर पर इन्द्रप्रस्थ धर्मांचल शिक्षण प्रशिक्षण शिविर समिति के पदाधिकारियों द्वारा डॉ. भारिल्ल को सम्मान राशि के रूप में 1 लाख रुपये प्रदान किये गये, जिसको उन्होंने शिविर खर्च में समर्पित कर दिये।

पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के समस्त ऑडियो – वीडियो, प्रवचन साहित्य एवं अन्य अनेक जानकारियों के लिये अवश्य देखें–
वेबसाईट – www.vitragvani.com
संपर्क सूत्र–श्री कुन्दकुन्द कहान पारमार्थिक ट्रस्ट, मुम्बई
Ph. : 022-26130820, 26104912, E-Mail - info@vitragvani.com

सिद्धभक्ति

21 सातवीं पूजन -डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

(गतांक से आगे...)

सातवाँ छन्द इसप्रकार है ह्न

(पद्धरि छन्द)

एकादशांग सर्वांग पूर्व, स्वैअनुभव पायो फल अपूर्व।
अन्तर-बाहिर परिग्रह नसाय, परमारथ साधू पद लहाय ।।७।।

ग्यारह अंग और चौदह पूर्वों का अपूर्व फल जो स्वानुभव, उसको आपने प्राप्त कर लिया है। आपने १४ अंतरंग और १० बहिरंग परिग्रहों का नाश कर दिया है, अभाव कर दिया है, इसप्रकार आपने परमार्थ साधु पद प्राप्त कर लिया है।

इस छन्द में उपाध्याय और साधु परमेष्ठी को सिद्धों में शामिल कर लिया है। ऊपर की पंक्ति में उपाध्याय और नीचे की पंक्ति में साधु परमेष्ठी को समाहित किया गया है।

इसप्रकार हे सिद्ध भगवन् ! आप ही अरहंत, आचार्य, उपाध्याय और साधु हो। तात्पर्य यह है कि अरहंतादि सभी परमेष्ठी आप में ही समाहित हैं।

चूंकि इस सातवीं पूजन में पाँचों परमेष्ठियों को सौ-सौ अर्घ्य चढ़ाये गये हैं। अत: जयमाला में भी पाँचों परमेष्ठियों को याद कर रहे हैं।

आचार्य, उपाध्याय और साधु परमेष्ठियों के नाम का उल्लेख तो स्पष्ट रूप में हो ही गया है। उसके पहले जो चर्चा की है, वह मुख्यरूप से सिद्ध और अरहंत परमेष्ठी की ही है।

प्रारंभिक दोहे में भी **पंच सुगुरु शिवकार** कहकर पंचपरमेष्ठियों को ही याद किया गया है।

अन्तिम पद्धरि छन्द इसप्रकार है ह्न

(पद्धरि छन्द)

हम पूजत निज उर भक्ति ठान, पावें निश्चय शिवपद महान।
ज्यों शशि किरणावलि सियर पाय, मणि चन्द्रकांति द्रवता लहाय ।।८।।

हे भगवन् ! हम हृदय में भक्ति स्थापित करके आपकी पूजन कर रहे हैं। इसके फल में हमें निश्चय से महान शिवपद की प्राप्ति हो।

तात्पर्य यह है कि हम किसी लौकिक कामना को लेकर आपकी पूजन नहीं कर रहे है; हमारी कामना तो एकमात्र मुक्ति प्राप्त करने की है।

उक्त छन्द में इस बात की मुख्यता नहीं है कि सिद्ध भगवान की पूजन करने से मुक्ति मिलेगी या नहीं; यहाँ तो यह भावना प्रधान है कि हम जो कुछ कर रहे हैं, वह मुक्ति पद प्राप्त करने की कामना से कर रहे हैं।

यद्यपि हमारी भावना लौकिक वस्तुओं को प्राप्त करने की नहीं है, तथापि फिर जो होगा, सो होगा।

यद्यपि हम यह भी जानते हैं कि आप कर्तृत्व भार से पूर्णत: रहित हैं; आप तो कुछ नहीं करते; तथापि जिसप्रकार चन्द्रमा की किरणों से शीतलता प्राप्त करके चन्द्रकान्तमणि स्वयं द्रवित होने लगता है; उसीप्रकार आपकी किरणावली से ठंडक पाकर हम लोग ही द्रवित हो जायेंगे।

इसके बाद एक घत्तानन्द नामक छन्द है; जो इसप्रकार है ह्न

(घत्तानन्द)

जय भव-भयहारं, बन्धविडारं, सुखसारं शिवकरतारं।
नित 'संत' सु ध्यावत, पाप नसावत, पावत पद निज अविकारं।।९।।

हे सिद्ध भगवन् ! आप संसार के भय को हरनेवाले हैं, अष्ट कर्मों के बंध का विदारण करनेवाले हैं, मुक्ति को प्राप्त करानेवाले हैं और सुख के सार हैं। संत कवि कहते हैं कि संत लोग आपका निरन्तर ध्यान करते हैं, अपने पापों को नष्ट करते हैं और अविकारी निजपद की प्राप्ति करते हैं।

अन्त में एक सोरठा है; जो इसप्रकार है ह्न

(सोरठा)

तुम गुण अमल अपार, अनुभवतें भव-भय नशै।
'संत' सदा चित धार, शांति करो भवतप हरो ।।१०।।

हे भगवन् ! आपके अमल गुण अपार हैं; उनका अनुभव करने से संसार का भय नष्ट हो जाता है।

संत कवि कहते हैं कि उन गुणों को सदा ही अपने चित्त में धारण करो। हे भगवन् ! शान्ति प्रदान करें और संसार का ताप हरण कीजिए।

इसप्रकार हम देखते हैं कि सर्वत्र ही मुक्ति की कामना की गई है; लौकिक आकांक्षाओं की पूर्ति की नहीं।

आठवीं पूजन

इस आठवीं पूजन के जल के छन्द में आत्मा को तीर्थ कहा है। जिससे तिरा जाय, उसे तीर्थ कहते हैं। **प्रत्येक आत्मा का कल्याण अपने आत्मा को जानने, उसे ही निजरूप जानने, निजरूप मानने, उसमें ही अपनापन स्थापित करने, ध्यान करने से ही होता है।**

अत: अपना आत्मा ही वास्तविक तीर्थ है।

जल के जिस छन्द में आत्मा को तीर्थ कहा गया है, वह छन्द इसप्रकार है ह्न

(गीता)

निज आत्मरूप सु तीर्थ मग नित सरस आनन्दधार हो।
नाशे त्रिविध मल सकल दुखमय भव–जलधि के पार हो ।।
यातैं उचित ही है जु तुम पद नीरसों पूजा करूँ।
इक सहस अरु चौबीस गुण गण भावयुत मन में धरूँ ।।

हे सिद्ध भगवन् ! आप अपने आत्मारूपी तीर्थ के रास्ते पर निरन्तर चलकर आनन्दरूपी जल की सरस धार में डुबकी लगाकर आपने तीन प्रकार के कर्ममलों का सम्पूर्णत: नाश कर दिया है और आप अत्यन्त दुखमय संसार समुद्र से पार हो गये हो।

ज्ञानावरणादि द्रव्यकर्म, मोह–राग–द्वेषादि भावकर्म और शरीरादि नोकर्मों ह्न इन तीनों कर्मों का नाश आपने कर दिया है; अत: आप त्रिविधमल नाशक हैं।

इसलिए यह उचित ही है कि मैं आपके चरण कमलों की जल से पूजा करूँ और आपके एक हजार चौबीस गुणों को अत्यन्त भावपूर्वक हृदय में धारण करूँ।

आठवीं पूजन के १०२४ अर्घ्यों में ९७९वें छन्द में **दया से रहित सिद्ध भगवान को अर्घ्य चढ़ाया गया है;** वह छन्द आज उपलब्ध पुस्तक में इसप्रकार छपा है ह्न

परदुख में दुख हो जहाँ, मोह प्रकृति के द्वार।
दया कहैं तिसको सुमति, सो तुम मोह निवार ।।

मोहनीय कर्म के उदय से दूसरे के दु:ख को देखकर जो दु:ख होता है, उस दु:ख को सम्यग्ज्ञानी जीव दया कहते हैं। हे सिद्ध भगवन् ! उस मोहनीय कर्म का निवारण आपने किया है।

इसकी ॐ ह्रीं भी इसप्रकार छपी है ह्न

ॐ ह्रीं अर्हं अत्यन्तनिर्मोहाय नम: अर्घ्यं .।

पर मैंने जब सबसे पहली बार इस सिद्धचक्र विधान का अध्ययन किया था; तब जो पुस्तक मुझे प्राप्त हुई थी, उसमें यह छन्द इसप्रकार छपा था ह्न

परदुख में दुख हो जहाँ, मोह प्रकृति के द्वार।
दया कहैं तिसको सुमति, सो तुम दया निवार ।।

उक्त दोनों छन्दों में मात्र इतना अन्तर है कि पुराने संस्करण में समागत छन्द के चतुर्थ पाद में **दयानिवार** पद था, जिसे आधुनिक संस्करण में **मोहनिवार** कर दिया गया है।

ॐ ह्रीं भी इसप्रकार थी ह्न **ॐ ह्रीं अत्यन्तनिर्दयाय नम: अर्घ्यं।**

जो परिवर्तन छन्द में किया गया; उसी के अनुसार ॐ ह्रीं में भी कर दिया गया है।

पर यह लोगों को अच्छा नहीं लगा, बरदाश्त नहीं हुआ कि सिद्ध भगवान को अत्यन्त निर्दयी कहा जाय। अत: इस अंश को बदल दिया गया। उक्त दोनों प्रतियों के बीच में जो बदली हुई प्रति मुझे प्राप्त हुई थी; उसमें मात्र इतना परिवर्तन था कि अत्यन्त निर्दयाय के स्थान पर दयारहिताय कर दिया गया था।

यह बहुत–कुछ ठीक था, पर लोगों को यह भी बरदाश्त नहीं हुआ तो अन्तिम कृति में न तो **अत्यन्त निर्दयाय** है और न **दया रहिताय** है; उसके स्थान पर **अत्यन्त निर्मोहाय** कर दिया गया है।

एक तो किसी कृति में परिवर्तन करने का अधिकार अन्य किसी को भी नहीं है; दूसरे जिस महत्त्वपूर्ण तथ्य की ओर संत कवि ध्यान आकर्षित करना चाहते थे, उनका यह प्रयास विफल हो गया।

तीसरी बात यह है कि आपने उन्हें गलत समझा और स्वयं को उनसे भी अधिक बड़ा विद्वान और समझदार समझा।

सिद्ध भगवान अनन्त सुखी हैं, अव्याबाधरूप से सुखी हैं; उन्हें दया नाम के दु:ख से दु:खी जाना, माना और प्रस्तुत किया; जिससे वीतरागी भगवान भी रागी सिद्ध हुए।

मैं अधिक क्या कहूँ ? ऐसे लोग तो मेरे इस प्रस्तुतिकरण पर नाक–भौं सिकोड़ेंगे; पर मैं क्या कर सकता हूँ ? मैंने तो एक सत्य तथ्य को मात्र प्रस्तुत ही किया है।

यह परिवर्तन किसने किया, कब किया; इसका मुझे कुछ भी पता नहीं है; पर अभी जो चल रहा है; वह आपके सामने है।

यद्यपि यह प्रति हमारे यहाँ से ही छपी है; पर यह प्रति तो उस परिवर्तित प्रति के आधार पर ही छपी है।

मैंने स्वयं इस सिद्धचक्र विधान को अनेक जगह कराया है। जब मैं विधान की जयमालाओं का अर्थ करता, उन पर व्याख्यान करता तो इस छन्द पर सभी का ध्यान आकर्षित किया करता था।

कहता था कि देखो, पूजन–विधान में भी यह लिखा है कि सिद्ध भगवान अत्यन्त निर्दयी हैं और यहाँ सिद्ध भगवान को अत्यन्त निर्दयी होने के लिए अर्घ्य चढ़ाया जा रहा है, उनकी पूजा की जा रही है। तात्पर्य यह है कि निर्दयीपना भी पूज्य है।

उक्त छन्द में अत्यन्त स्पष्ट शब्दों में लिखा है कि दया भाव मोहनीय कर्म के उदय का कार्य है। आठ कर्मों में मोहनीय कर्म सबसे अधिक खतरनाक कर्म है। मोहनीय कर्म के उदय में मिथ्यात्वभाव और राग–द्वेष भाव होते हैं; वे मिथ्यात्व और राग–द्वेष अनन्त संसार के कारण हैं।

यद्यपि दयाभाव शुभरागरूप भाव हैं; तथापि यह स्वयं

(शेष पृष्ठ 3 पर ...)

आध्यात्मिकसत्पुरुष श्रीकानजीस्वामी के संबंध में उनके समकालीन मनीषियों द्वारा व्यक्त किये गये हृदयोद्गार –

आध्यात्मिकसत्पुरुष श्री कानजीस्वामी

सच्चे मुनि उपासक

– नेमीचंद पाटनी

जब कभी स्वामीजी परम पूज्य मुनिराजों की आन्तरिक एवं बाह्य दशा का निरूपण करते हैं, स्वयं डोलने लगते हैं। पंचकल्याणक प्रतिष्ठाओं के अवसर पर दीक्षा–कल्याणक के समय पूज्य स्वामीजी के प्रवचन सुननेवालों को पूज्य स्वामीजी के आन्तरिक भाव तथा आन्तरिक रुचि और मुनिदशा के प्रति उत्कृष्ट भक्ति का भास हुए बिना नहीं रहता। स्वामीजी मनिदशा का वर्णन करते हुए कहने लगते हैं –'हम तो उन महामुनिराज के दासानुदास हैं। उनकी चरण रस भी मस्तक पर चढाने को मिल जावे तो धन्यभाग्य हैं। छठे सातवें गुणस्थान के झूले में झूलने वाले महामुनिराज के दर्शन भी प्राप्त हो जावे तो जीवन सफल है। वह अवसर कब आयेगा जब ऐसे मुनिराजों के साक्षात् दर्शन का लाभ मिलेगा। प्रवचनसार की चरणानुयोगसूचक चूलिका पर जो पूज्य स्वामीजी के प्रवचन हुए उनके सुननेवाले को उनकी मुनिभक्ति का सहज परिचय प्राप्त हुआ होगा।

तीर्थयात्रा के समय प्रत्येक यात्रा स्थान पर उनकी इस मुनिभक्ति का सहज परिचय मिलता है। जब वे यात्रास्थल पर पूजन, वंदना, भक्ति एवं चरणरज मस्तक पर चढाते हैं तथा उस स्थान का तथा यात्रा का महत्व सबको समझाते हुए कहते हैं –'यह यात्रा स्थल उन महामुनिराज की तपोभूमि है। यह उस समय की स्मृति को ताजा करती है जब वहां पर वे सिंहवृत्तिधारी महामुनिराज विहार करते थे और आत्मानंद में डूब जाते थे। डुबकियां लगाते लगाते ऐसे डूबते थे कि फिर उसमें से बाहर ही नहीं निकलते थे। वर्तमान में इसी स्थान की समश्रेणी से सिद्धशिला पर इसी स्थान के ऊपर वे आत्मानन्द को भोगते हुए विराज रहे हैं और अनन्त काल तक विराजेंगे। यही है वह अपूर्व स्थान। हमारे लिये उस ओर की रुचि जागृत करने का एवं उस ओर का पुरुषार्थ बढाने के साधनरूप यह यात्रास्थल है आदि वचन पूज्य स्वामीजी की मुनिभक्ति के द्योतक हैं। इसप्रकार श्री स्वामीजी मुनि दशा के परम उपासक आराधक एवं अनन्य भक्त हैं। मेरा उनके चरणों में बार–बार प्रणाम है।

क्रमबद्धपर्याय पर विद्वत्गोष्ठी संपन्न

दिल्ली : यहाँ प्रशिक्षण शिविर के अवसर पर अखिल भारतीय दिगम्बर जैन विद्वत्परिषद् एवं पण्डित टोडरमल स्नातक परिषद् के संयुक्त तत्त्वावधान में दिनांक 24 से 26 मई 2014 तक 'क्रमबद्धपर्याय' विषय पर विद्वत्गोष्ठी का आयोजन तीन सत्रों में किया गया।

दिनांक 24 मई को प्रथम सत्र की अध्यक्षता पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली ने की। गोष्ठी में डॉ. नरेन्द्रजी जैन ने **क्रमबद्धपर्याय का सामान्य स्वरूप**, डॉ. शुद्धात्मप्रभा टडैया ने **क्रमबद्धपर्याय और कानजीस्वामी** एवं डॉ. संजीवकुमारजी गोधा ने **क्रमबद्धपर्याय और अकालमृत्यु** विषय पर अपना मार्मिक वक्तव्य प्रस्तुत किया।

इस सत्र में मंगलाचरण वीकेश जैन खड़ैरी ने एवं संचालन पण्डित पीयूषजी शास्त्री ने किया।

दिनांक 25 मई को द्वितीय सत्र की अध्यक्षता डॉ. वीरसागरजी शास्त्री दिल्ली ने की। गोष्ठी में पण्डित राकेशजी लोनी ने **क्रमबद्धपर्याय और पुरुषार्थ**, पण्डित मनीषजी शास्त्री खतौली ने **क्रमबद्धपर्याय और सर्वज्ञता** एवं डॉ. राजेन्द्रजी बंसल ने **क्रमबद्धपर्याय और आत्मानुभूति** विषय पर अपना वक्तव्य प्रस्तुत किया।

इस सत्र में मंगलाचरण श्री रिमांशु जैन लाम्बाखोह ने एवं संचालन पण्डित शान्तिकुमारजी पाटील ने किया।

दिनांक 26 मई को तृतीय सत्र की अध्यक्षता तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल ने की। गोष्ठी में डॉ. अशोकजी गोयल ने **क्रमबद्धपर्याय और चार अनुयोग**, पण्डित शान्तिकुमारजी पाटील ने **क्रमबद्धपर्याय और कार्य कारण व्यवस्था** एवं पण्डित परमात्मप्रकाशजी भारिल्ल ने **क्रमबद्धपर्याय का प्रयोजन** विषय पर अपना वक्तव्य प्रस्तुत किया।

इस सत्र में मंगलाचरण शुभम जैन सागर ने एवं संचालन डॉ. राजेन्द्रजी बंसल अमलाई ने किया।

प्रकाशन तिथि : 28 मई 2014

प्रति,

सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., बी.एड.
सह–सम्पादक : **डॉ.संजीवकुमार गोधा**, एम.ए.द्वय, नेट, एम.फिल (जैनदर्शन), पीएच.डी. एवं **पण्डित परमात्मप्रकाश भारिल्ल**
प्रकाशक एवं मुद्रक : **ब्र. यशपाल जैन** द्वारा जैनपथप्रदर्शक समिति के लिए जयपुर प्रिण्टर्स प्रा.लि., जयपुर से मुद्रित तथा त्रिमूर्ति कम्प्यूटर्स, श्री टोडरमल स्मारक भवन, ए–४, बापूनगर, जयपुर से प्रकाशित।

यदि न पहुँचे तो निम्न पते पर भेजें –
ए– 4 बापूनगर, जयपुर – 302015 (राज.)
फोन : (0141) 2705581, 2707458
E-Mail : ptstjaipur@yahoo.com **फैक्स :** (0141) 2704127